© JUN 2026 | IRE Journals | Volume 9 Issue 12 | ISSN: 2456-8880
DOI: https://doi.org/10.64388/IREV9I12-1719068

भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा और आधुनिक पर्यावरण कानून: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अनिल साकेत[1], श्री शशिकांत दुबे[2], डॉ. सुधीर कुमार जैन[3]
[1] शोधार्थी, विधि संकाय, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश
[2] मार्गदर्शक, विधि संकाय, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश
[3] डीन, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना, म.प्र.

यह शोध- पत्र भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित प्रकृति संरक्षण की अवधारणाओं तथा आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानूनों के मध्य संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन नहीं बल्कि जीवन, धर्म और संस्कृति का अभिन्न अंग माना गया है। वेद, उपनिषद, स्मृतियाँ तथा अन्य प्राचीन ग्रंथ पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता, जल संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर विशेष बल देते हैं। वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण प्रदूषण, वनों के विनाश तथा जैव विविधता के ह्रास जैसी समस्याएँ वैश्विक चिंता का विषय बन चुकी हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु आधुनिक पर्यावरण कानूनों का विकास हुआ है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित पर्यावरणीय मूल्यों का अध्ययन करना तथा यह विश्लेषण करना है कि वे आधुनिक पर्यावरणीय न्यायशास्त्र और विधिक ढाँचे को किस प्रकार सुदृढ़ बना सकते हैं। अध्ययन में गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। निष्कर्षतः यह पाया गया है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली के सिद्धांत—जैसे पंचमहाभूत, वसुधैव कुटुम्बकम्, अहिंसा तथा प्रकृति के प्रति सम्मान—आधुनिक पर्यावरण कानूनों एवं सतत विकास की अवधारणा को अधिक प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

सूचक शब्द- भारतीय ज्ञान प्रणाली, पर्यावरण कानून, पर्यावरणीय न्यायशास्त्र, सतत विकास, जैव विविधता ।

I. प्रस्तावना

“माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः”

अर्थात् पृथ्वी हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। यह वैदिक उद्घोष भारतीय संस्कृति में प्रकृति के प्रति सम्मान और संरक्षण की भावना को व्यक्त करता है।

पर्यावरण मानव जीवन का आधार है। स्वच्छ वायु, शुद्ध जल, उपजाऊ भूमि तथा जैव विविधता के बिना मानव अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। किंतु औद्योगिकीकरण, नगरीकरण और प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन ने पर्यावरणीय संकट को जन्म दिया है। जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, वन विनाश तथा प्रदूषण जैसी समस्याएँ आज संपूर्ण विश्व के समक्ष चुनौती बनकर खड़ी हैं।

भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति और मानव के मध्य सह-अस्तित्व की अवधारणा विद्यमान है। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों और पुराणों में पर्यावरण संरक्षण को धार्मिक, नैतिक तथा सामाजिक दायित्व के रूप में स्वीकार किया गया है। आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानून भी पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। इसलिए भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक पर्यावरण कानूनों के मध्य अंतर्संबंधों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

II. शोध परिकल्पना

इस शोध की मूल परिकल्पना यह है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित प्रकृति संरक्षण के सिद्धांत आधुनिक पर्यावरण कानूनों और पर्यावरणीय न्यायशास्त्र को अधिक प्रभावी, जनोन्मुखी तथा सतत विकासोन्मुख बना सकते हैं। यदि इन पारंपरिक मूल्यों को आधुनिक विधिक संरचनाओं में समुचित स्थान दिया जाए, तो पर्यावरण संरक्षण के लक्ष्य को अधिक प्रभावी ढंग से प्राप्त किया जा सकता है।

III. समस्या कथन

भारतीय संस्कृति में प्रकृति संरक्षण की समृद्ध परंपरा होने के बावजूद वर्तमान समय में पर्यावरणीय समस्याएँ लगातार बढ़ रही हैं। आधुनिक पर्यावरण कानूनों के अस्तित्व के बावजूद प्रदूषण, वनों की कटाई, जल संकट तथा जैव विविधता का

ह्रास गंभीर चिंता का विषय बना हुआ है। इस स्थिति में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित पर्यावरणीय सिद्धांत आधुनिक पर्यावरण कानूनों को अधिक प्रभावी बनाने में सहायक हो सकते हैं। यही इस शोध की प्रमुख समस्या है।

IV. अध्ययन के उद्देश्य

1. भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा का अध्ययन करना।
2. भारतीय परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करना।
3. आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानूनों की समीक्षा करना।
4. भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक पर्यावरण कानूनों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
5. सतत विकास एवं पर्यावरणीय न्यायशास्त्र में भारतीय ज्ञान प्रणाली की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

V. शोध प्रश्न

1. भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा क्या है?
2. भारतीय परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण के प्रमुख साधन कौन-कौन से हैं?
3. आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानूनों की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

VI. शोध का महत्व

यह अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक पर्यावरणीय विधि के मध्य संबंध स्थापित करता है। वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट के समाधान हेतु केवल विधिक उपाय पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों की भी आवश्यकता है। भारतीय ज्ञान प्रणाली पर्यावरण संरक्षण के लिए एक नैतिक आधार प्रदान करती है। यह शोध नीति-निर्माताओं, विधिवेत्ताओं, शोधार्थियों तथा पर्यावरणविदों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

VII. साहित्य समीक्षा

• ऋग्वेद, अथर्ववेद और उपनिषदों में प्रकृति संरक्षण और पर्यावरणीय संतुलन का उल्लेख मिलता है।
• कौटिल्य के अर्थशास्त्र में वन, जल तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए विभिन्न प्रावधानों का वर्णन है।
• पी.वी. काणे ने धर्मशास्त्रों में वर्णित पर्यावरणीय अवधारणाओं का विश्लेषण किया है।
• श्याम दीवान और अर्मिन रोसेनक्रांज ने भारतीय पर्यावरण कानूनों के विकास का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है।
• विभिन्न न्यायिक निर्णयों ने पर्यावरण संरक्षण को मौलिक अधिकारों से जोड़ा है।

VIII. शोध पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक (Qualitative) एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) शोध पद्धति पर आधारित है।

स्रोत

प्राथमिक स्रोत

- वेद
- उपनिषद
- मनुस्मृति
- याज्ञवल्क्य स्मृति
- अर्थशास्त्र
- भारतीय संविधान
- पर्यावरण संबंधी अधिनियम

द्वितीयक स्रोत

- पुस्तकें
- शोध-पत्र
- न्यायिक निर्णय
- विधि आयोग की रिपोर्टें
- सरकारी प्रकाशन

दृष्टिकोण

अध्ययन में तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है।

अध्ययन की सीमा

यह शोध भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा तथा आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानूनों तक सीमित है।

IX. विश्लेषण एवं व्याख्या

9.1 भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा

भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन के रूप में नहीं, बल्कि जीवन, धर्म और संस्कृति के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। प्राचीन भारतीय दर्शन मानव और प्रकृति के मध्य सह-अस्तित्व, संतुलन तथा पारस्परिक निर्भरता पर बल देता है। वेदों, उपनिषदों, पुराणों तथा स्मृतियों में प्रकृति के विभिन्न तत्वों—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—को देवतुल्य स्थान प्रदान किया गया है तथा उनके संरक्षण को मानव का नैतिक एवं धार्मिक कर्तव्य माना गया है।[1]

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में पृथ्वी को माता तथा मानव को उसका पुत्र बताया गया है—"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"।[2] यह विचार प्रकृति के प्रति सम्मान, उत्तरदायित्व और संरक्षण की भावना को प्रकट करता है। इसी प्रकार ऋग्वेद में जल, वायु तथा वनस्पतियों की स्तुति करते हुए उन्हें जीवन का आधार माना गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा यह मानती है कि प्रकृति का संतुलन बिगड़ने पर मानव जीवन भी संकटग्रस्त हो जाता है।[3]

भारतीय दर्शन का पंचमहाभूत सिद्धांत—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—प्रकृति संरक्षण की अवधारणा का प्रमुख आधार है। इन पाँच तत्वों को संपूर्ण सृष्टि का मूल माना गया है तथा इनके मध्य संतुलन को स्वस्थ जीवन और पर्यावरण की अनिवार्य शर्त बताया गया है।[4] आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान भी पर्यावरणीय संतुलन और जैविक तंत्रों की परस्पर निर्भरता को स्वीकार करता है, जिससे भारतीय ज्ञान प्रणाली की वैज्ञानिक प्रासंगिकता सिद्ध होती है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली में "वसुधैव कुटुम्बकम्" का सिद्धांत संपूर्ण विश्व को एक परिवार मानता है। यह सिद्धांत मानव, पशु-पक्षी, वनस्पति तथा समस्त जीव-जगत के प्रति समान सम्मान और संरक्षण की भावना विकसित करता है।[5] वर्तमान समय में सतत विकास (Sustainable Development) तथा पर्यावरणीय न्याय (Environmental Justice) की अवधारणाएँ भी इसी व्यापक दृष्टिकोण को अपनाने पर बल देती हैं। इसलिए भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित प्रकृति संरक्षण की अवधारणा आधुनिक पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान हेतु अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध होती है।[6]

9.2 भारतीय परंपरा में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

भारतीय परंपराओं में पर्यावरण संरक्षण केवल सैद्धांतिक विचार नहीं था, बल्कि यह सामाजिक और धार्मिक जीवन का अभिन्न अंग था। विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों, परंपराओं और सामाजिक व्यवस्थाओं के माध्यम से प्रकृति संरक्षण सुनिश्चित किया जाता था।

(क) वृक्ष संरक्षण

भारतीय संस्कृति में पीपल, बरगद, नीम, तुलसी तथा बेल जैसे वृक्षों को पवित्र माना गया है। इन वृक्षों की पूजा करने की परंपरा ने इनके संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्राचीन ग्रंथों में वृक्षों को काटने को पाप तथा वृक्षारोपण को पुण्य कार्य माना गया है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली में वृक्षों को देवतुल्य माना गया है। वृक्ष संरक्षण के महत्व को दर्शाने वाला एक प्रसिद्ध श्लोक है—

"दशकूपसमावापी दशवापीसमो ह्रदः।
दशह्रदसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः॥"

अर्थ:
दस कुओं के बराबर एक बावड़ी होती है, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब होता है, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र होता है और दस पुत्रों के समान एक वृक्ष माना गया है।

यह श्लोक वृक्षों के महत्व को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करता है तथा वृक्षारोपण और वृक्ष संरक्षण की आवश्यकता पर बल देता है।[7]

(ख) जल संरक्षण

भारत में नदियों को देवी का स्वरूप माना गया है। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी तथा कावेरी जैसी नदियाँ धार्मिक आस्था का केंद्र रही हैं। जल स्रोतों के संरक्षण हेतु तालाब, कुएँ, बावड़ियाँ तथा सरोवरों का निर्माण किया जाता था।

© JUN 2026 | IRE Journals | Volume 9 Issue 12 | ISSN: 2456-8880
DOI: https://doi.org/10.64388/IREV9I12-1719068

(ग) वन संरक्षण

वनों को प्राचीन भारत में जीवन और संस्कृति का आधार माना जाता था। आश्रम व्यवस्था और तपोवन संस्कृति ने वन संरक्षण को बढ़ावा दिया। अनेक क्षेत्रों में पवित्र वन (Sacred Groves) स्थापित किए गए जहाँ वृक्षों को काटना निषिद्ध था।

(घ) जैव विविधता संरक्षण

भारतीय संस्कृति में विभिन्न पशु-पक्षियों को धार्मिक महत्व प्रदान किया गया। गाय, नाग, गरुड़, मोर, हाथी तथा अन्य जीवों को देवताओं से जोड़कर उनके संरक्षण की व्यवस्था की गई। इस प्रकार भारतीय समाज में जैव विविधता संरक्षण की परंपरा विकसित हुई।

9.3 आधुनिक भारतीय पर्यावरण कानूनों का विकास

स्वतंत्रता के पश्चात औद्योगिकीकरण और शहरीकरण की तीव्र गति के कारण पर्यावरणीय समस्याओं में वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप भारत में विभिन्न पर्यावरणीय कानूनों का निर्माण किया गया।

(क) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 भारत का प्रमुख और व्यापक पर्यावरणीय कानून है, जिसे Bhopal Gas Tragedy के पश्चात् पर्यावरण सुरक्षा को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया। यह अधिनियम केंद्र सरकार को पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यापक शक्तियाँ प्रदान करता है। इसके अंतर्गत प्रदूषण नियंत्रण, पर्यावरणीय मानकों का निर्धारण तथा पर्यावरणीय जोखिमों की रोकथाम के लिए आवश्यक उपाय किए जाते हैं। यह अधिनियम भारत में पर्यावरणीय प्रशासन और नियमन की आधारशिला माना जाता है।

(ख) जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974

जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974 भारत का पहला व्यापक पर्यावरणीय कानून माना जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य नदियों, झीलों, तालाबों तथा अन्य जल स्रोतों को प्रदूषण से बचाना तथा उनकी गुणवत्ता बनाए रखना है। इस अधिनियम के अंतर्गत केंद्रीय तथा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की स्थापना की गई, जो जल प्रदूषण की निगरानी एवं नियंत्रण का कार्य करते हैं। यह कानून स्वच्छ जल को मानव जीवन और पर्यावरणीय संतुलन के लिए आवश्यक मानता है।

(ग) वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981

औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण बढ़ते वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के उद्देश्य से वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 लागू किया गया। यह अधिनियम उद्योगों, वाहनों तथा अन्य स्रोतों से होने वाले वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए कानूनी प्रावधान प्रदान करता है। इसके माध्यम से प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों को वायु गुणवत्ता की निगरानी और प्रदूषणकारी गतिविधियों पर नियंत्रण की शक्ति दी गई है। स्वच्छ वायु को मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण संरक्षण के लिए अनिवार्य माना गया है।

(घ) वन संरक्षण अधिनियम, 1980

वन संरक्षण अधिनियम, 1980 का उद्देश्य देश के वन क्षेत्रों को अनियंत्रित कटाई और गैर-वन उपयोगों से बचाना है। इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी वन भूमि का गैर-वन प्रयोजनों के लिए उपयोग करने से पूर्व केंद्र सरकार की अनुमति आवश्यक होती है। यह कानून वनों के संरक्षण, पारिस्थितिक संतुलन तथा जैव विविधता की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके परिणामस्वरूप वन क्षेत्रों के अंधाधुंध दोहन पर नियंत्रण स्थापित हुआ है।

(ङ) जैव विविधता अधिनियम, 2002

जैव विविधता अधिनियम, 2002 का निर्माण भारत की समृद्ध जैविक विविधता के संरक्षण तथा उसके सतत उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए किया गया। यह अधिनियम जैव संसाधनों और पारंपरिक ज्ञान के संरक्षण पर विशेष बल देता है। इसके अंतर्गत National Biodiversity Authority की स्थापना की गई, जो जैव संसाधनों के उपयोग और संरक्षण से संबंधित मामलों का नियमन करती है। यह अधिनियम स्थानीय समुदायों के अधिकारों की रक्षा करते हुए जैव संसाधनों के न्यायसंगत लाभ-साझाकरण को भी प्रोत्साहित करता है।

(च) राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010

राष्ट्रीय हरित अधिकरण अधिनियम, 2010 के अंतर्गत National Green Tribunal की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य पर्यावरणीय मामलों का त्वरित और प्रभावी निपटारा करना है। यह अधिकरण पर्यावरण संरक्षण, वन संरक्षण तथा जैव विविधता से संबंधित विवादों की सुनवाई करता है। राष्ट्रीय हरित अधिकरण ने पर्यावरणीय न्याय को सुलभ और प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके माध्यम से पर्यावरणीय क्षति के मामलों में शीघ्र न्याय और प्रतिकर की व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है।

9.4 भारतीय संविधान एवं पर्यावरण संरक्षण

भारतीय संविधान पर्यावरण संरक्षण को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है।

अनुच्छेद 21

उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों में स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण को जीवन के अधिकार का अभिन्न अंग माना है।

अनुच्छेद 48A

राज्य को पर्यावरण, वन तथा वन्यजीवों की रक्षा और संवर्धन का निर्देश देता है।

अनुच्छेद 51A(g)

प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और संवर्धन करे।

संविधान के इन प्रावधानों ने पर्यावरण संरक्षण को केवल सरकारी दायित्व न मानकर नागरिकों का भी कर्तव्य बनाया है।

9.5 भारतीय ज्ञान प्रणाली और आधुनिक पर्यावरण कानून का तुलनात्मक अध्ययन

भारतीय ज्ञान प्रणाली तथा आधुनिक पर्यावरण कानून दोनों का मूल उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण और मानव कल्याण सुनिश्चित करना है, किंतु दोनों की कार्यप्रणाली और आधारभूत दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण अंतर देखने को मिलता है। भारतीय ज्ञान प्रणाली प्रकृति को केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन और सृष्टि का अभिन्न अंग मानती है। वेदों, उपनिषदों तथा स्मृतियों में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश को देवतुल्य मानकर उनके संरक्षण को धार्मिक एवं नैतिक कर्तव्य बताया गया है।[8] इसके विपरीत आधुनिक पर्यावरण कानून पर्यावरण संरक्षण के लिए विधिक नियमों, संस्थागत व्यवस्थाओं और दंडात्मक प्रावधानों पर आधारित हैं।[9]

भारतीय ज्ञान प्रणाली में पर्यावरण संरक्षण मुख्यतः स्वैच्छिक आचरण, सामाजिक उत्तरदायित्व और धार्मिक आस्था द्वारा सुनिश्चित किया जाता था। वृक्षों की पूजा, नदियों को देवी का स्वरूप मानना तथा पवित्र वनों की परंपरा इसके प्रमुख उदाहरण हैं।[10] दूसरी ओर आधुनिक पर्यावरण कानून पर्यावरण संरक्षण को कानूनी दायित्व के रूप में स्थापित करते हैं तथा उल्लंघन की स्थिति में दंड का प्रावधान करते हैं।[11] इस प्रकार जहाँ भारतीय परंपरा नैतिक चेतना पर आधारित है, वहीं आधुनिक विधि नियामक नियंत्रण पर आधारित है।

दोनों व्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण समानता यह है कि दोनों पर्यावरणीय संतुलन और भावी पीढ़ियों के हितों की रक्षा पर बल देती हैं। भारतीय ज्ञान प्रणाली का “वसुधैव कुटुम्बकम्” तथा “सर्वे भवन्तु सुखिनः” का सिद्धांत समस्त जीव-जगत के कल्याण की बात करता है, जबकि आधुनिक पर्यावरणीय न्यायशास्त्र सतत विकास (Sustainable Development) और अंतर-पीढ़ीगत समानता (Inter-generational Equity) के सिद्धांतों को स्वीकार करता है।[12]

वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में यह स्पष्ट है कि केवल कानूनी प्रावधान पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्याप्त नहीं हैं। पर्यावरणीय चेतना, नैतिक उत्तरदायित्व तथा सामाजिक सहभागिता की भी आवश्यकता है। अतः भारतीय ज्ञान प्रणाली के नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों तथा आधुनिक पर्यावरण कानूनों की विधिक संरचना का समन्वय पर्यावरण संरक्षण को अधिक प्रभावी, जनोन्मुखी तथा स्थायी बना सकता है।[13]

9.6 पर्यावरणीय न्यायशास्त्र और न्यायपालिका की भूमिका

भारतीय न्यायपालिका ने पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उच्चतम न्यायालय ने अनेक निर्णयों के माध्यम से पर्यावरणीय न्यायशास्त्र को विकसित किया है।

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ

इस वाद में न्यायालय ने पर्यावरण संरक्षण को जीवन के अधिकार से जोड़ा।

वेल्लोर सिटीजन्स वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ

इस मामले में न्यायालय ने "सतत विकास", "प्रदूषक भुगतान सिद्धांत" तथा "सावधानी सिद्धांत" को भारतीय विधि का हिस्सा माना।

सुबाष कुमार बनाम बिहार राज्य

न्यायालय ने स्वच्छ जल और प्रदूषण मुक्त वातावरण को मौलिक अधिकार घोषित किया।

इन निर्णयों से स्पष्ट है कि न्यायपालिका ने पर्यावरणीय न्याय की अवधारणा को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

11.7 सतत विकास में भारतीय ज्ञान प्रणाली की प्रासंगिकता

सतत विकास का अर्थ वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार करना है कि भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

भारतीय ज्ञान प्रणाली में संयम, संतुलन, सह-अस्तित्व तथा संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग पर बल दिया गया है। ये सभी तत्व सतत विकास की आधुनिक अवधारणा के अनुरूप हैं।

वर्तमान पर्यावरणीय संकट के समाधान हेतु भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित सिद्धांतों को पर्यावरणीय नीतियों, शिक्षा तथा विधिक ढाँचों में समाहित किया जाना चाहिए। इससे पर्यावरण संरक्षण के प्रति सामाजिक चेतना विकसित होगी तथा सतत विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता मिलेगी।

X. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली में प्रकृति संरक्षण की अवधारणा अत्यंत विकसित, व्यापक तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता, जल संरक्षण तथा प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर विशेष बल दिया गया है। आधुनिक पर्यावरण कानून पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक विधिक ढाँचा प्रदान करते हैं, किंतु केवल कानूनों के माध्यम से पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान संभव नहीं है। इसके लिए सामाजिक चेतना, नैतिक उत्तरदायित्व तथा सांस्कृतिक मूल्यों की भी आवश्यकता है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली इन सभी तत्वों को समाहित करती है। यदि इसके सिद्धांतों को आधुनिक पर्यावरण कानूनों और नीतियों में उचित स्थान दिया जाए तो पर्यावरण संरक्षण अधिक प्रभावी और स्थायी बनाया जा सकता है। अतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली आधुनिक पर्यावरणीय न्यायशास्त्र तथा सतत विकास के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है।

XI. सुझाव

• विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भारतीय ज्ञान प्रणाली आधारित पर्यावरण शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाए।

• पर्यावरणीय नीतियों के निर्माण में भारतीय सांस्कृतिक एवं पारंपरिक ज्ञान को शामिल किया जाए।

• पवित्र वनों, पारंपरिक जल स्रोतों तथा जैव विविधता संरक्षण की स्थानीय प्रणालियों को संरक्षण प्रदान किया जाए।

• पर्यावरण संरक्षण के प्रति जन-जागरूकता बढ़ाने हेतु धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं की सहभागिता सुनिश्चित की जाए।

• पर्यावरणीय कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु प्रशासनिक तंत्र को सुदृढ़ बनाया जाए।

• सतत विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भारतीय ज्ञान प्रणाली के सिद्धांतों को नीति-निर्माण में समाहित किया जाए।

XII. संदर्भ सूची

[1] ऋग्वेद।
[2] अथर्ववेद।
[3] यजुर्वेद।
[4] उपनिषद।
[5] मनुस्मृति।

© JUN 2026 | IRE Journals | Volume 9 Issue 12 | ISSN: 2456-8880
DOI: https://doi.org/10.64388/IREV9I12-1719068

[6] याज्ञवल्क्य स्मृति।

[7] कौटिल्य, अर्थशास्त्र।

[8] भारतीय संविधान।

[9] पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986।

[10] जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974।

[11] वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981।

[12] वन संरक्षण अधिनियम, 1980।

[13] जैव विविधता अधिनियम, 2002।

[14] M.C. Mehta v. Union of India.

[15] Vellore Citizens Welfare Forum v. Union of India.

[16] Subhash Kumar v. State of Bihar.

[17] P.V. Kane, History of Dharmasastra.

[18] Shyam Divan & Armin Rosencranz, Environmental Law and Policy in India.

[19] Paras Diwan, Environmental Administration and Law.

विभिन्न शोध-पत्र एवं विधि आयोग रिपोर्टें।

FOOTNOTES

[1] पी.वी. काणे, हिस्ट्री ऑफ़ धर्मशास्त्र, खंड II, भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पुणे, 1968, पृष्ठ 728।

[2] अथर्ववेद, 12.1.12 (पृथ्वी सूक्त)।

[3] ऋग्वेद, 10.9; आर. एन. दांडेकर

[4] एस. राधाकृष्णन, इंडियन फिलॉसफी, खंड I, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 167

[5] *महा उपनिषद*, अध्याय 6, श्लोक 72

[6] कपिल कपूर और अवधेश कुमार सिंह (संपादक), इंडियन नॉलेज सिस्टम्स: प्रिंसिपल्स एंड एप्लीकेशन्स, डी.के. प्रिंटवर्ल्ड, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ 95।

[7] मत्स्य पुराण, चौ. 154, श्लोक 512.

[8] ऋग्वेद, 10.90; अथर्ववेद, 12.1 (पृथ्वी सूक्त)।

[9] पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986; श्याम दीवान एवं अर्मिन रोसेनक्रांज

[10] पी. वी. काने, धर्मशास्त्र का इतिहास, खंड। द्वितीय

[11] न संरक्षण अधिनियम, 1980; जैव विविधता अधिनियम, 2002.

[12] ब्रंटलैंड रिपोर्ट, पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग, 1987, पृष्ठ 43।

[13] पारस दीवान, एनवायरनमेंटल एडमिनिस्ट्रेशन, लॉ एंड ज्यूडिशियल एटीट्यूड, डीप एंड डीप पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1992, पृष्ठ 114।